Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
Available online at : www.gisrrj.com
OPEN ACCESS
© 2023 GISRRJ | Volume 6 | Issue 5 | ISSN : 2582-0095

समकालीन हिन्दी कविता और स्त्री–विमर्श

डॉ राकेश चंद्र
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, जे वी जैन कालेज, सहारनपुर , भारत।

Article Info
Volume 6, Issue 5
Page Number : 19-22
Publication Issue :
September-October-2023
Article History
Accepted : 01 Sep 2023
Published : 20 Sep 2023

साहित्य में स्त्री शब्द ऐसा शब्द है जिस पर बार–बार साहित्यकारों का ध्यान गया। स्त्री विमर्श का अर्थ है स्त्री को केन्द्र में रखते हुए स्त्री की सारी समस्याओं को साहित्य में स्थान देना तथा उन सभी समस्याओं के कारण और प्रकार जानकर उनके निराकरण के लिए उचित समाधान बताना। दूसरे शब्दों में हम ऐसा भी कह सकते हैं कि लैंगिक असमानता, अन्याय और शोषण के विरूद्ध स्त्री को स्वतन्त्रता, समानता के अवसर देना तथा शिक्षा, सम्पत्ति, कार्यस्थल, न्याय आदि में किसी भी प्रकार का भेदभाव न करना।

समकालीन हिन्दी कविता में स्त्री–विमर्श केन्द्र में रहा है। स्त्री–विमर्श के केन्द्र में होने के पीछे के कारण को राकेश कुमार के कथन से समझा जा सकता है–

''स्त्री विमर्श में उठने वाले सवाल महज स्त्रियों से जुड़े हुए ही नहीं हैं, अपितु उनमें हमें पितृसत्तात्मक समाज के दोहरे मापदण्ड़ों, पितृक मूल्यों, लिंगभेद की राजनीति और स्त्री उत्पीड़न के अन्तर्निहित कारणों को समझने की भी गहरी दृष्टि प्राप्त होती है।''[1]

समकालीन कवियों ने स्त्रियों पर होते आ रहे अत्याचारों और उत्पीड़नों को वाणी दी है। नारियों ने जो भी उपेक्षा, तिरस्कार एवं लिंगभेद झेला है उसके लिये हमारा पितृसत्तात्मक समाज उत्तरदायी है। समकालीन कवियों ने आधी आबादी के उत्पीड़न को वाणी दी है। समाज की विड़म्बना यही है कि नारी जिस पर विश्वास करती है वो ही उसके विश्वास को छलता है। जैसे किरण अग्रवाल की कविता 'गाँठें' से ये उदाहरण पुरूषों के चारित्रिक पतन की ओर संकेत करता है। जहाँ एक लड़की गणित की समस्या हल करने पर प्रथम पुरस्कार प्राप्त करती है और खुशी से अपने अध्यापक को इसका श्रेय देने के लिए उसके घर चली जाती है किन्तु अध्यापक की कुत्सित मानसिकता का शिकार हो जाती है। उसका वही अध्यापक उसके साथ दुराचार करता है और गुरू–शिष्या के पवित्र रिश्ते को कलंकित करता है।

''एक साधारण सा गणित
उसकी समझ में नहीं आया
हंसी भी वह
जला दी थी गणित की सारी किताबें उस दिन
तोड़ दिये थे सारे मैडल
बदल गया था सहसा अर्थ जीवन का।''[2]

जिस समाज में शिष्या गुरू के घर भी सुरक्षित नही तब घर आने–जाने वाले रास्ते की तो बात ही क्या की जाये? कहने का तात्पर्य है कि नारी हर जगह यौन उत्पीड़न झेल रही है। कामकाजी नारी का जीवन ऐसे ही तनावों और दबावों के बीच पिस रहा है जहाँ एक तरफ परिवार को आर्थिक रूप से सहारा

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

देने का हौंसला है तो दूसरी तरफ ऑफिस का माहौल और आने–जाने के रास्तों का डर उनके तनावों को बढ़ा देता है। नारी को सदैव ही अपने मान–सम्मान की रक्षा का डर सताता रहता है। ऐसे डर के माहौल में कोई भी अपने काम पर कैसे पूरा ध्यान लगा सकता है? घर और बाहर के काम के दबाव में नारी को जो सुख–सुविधा घर पर मिल जाती है, घरवाले समझते हैं जैसे वो बहुत खुशनसीब है किन्तु वो घरवाले शायद ये बात नहीं जानते कि वो किस–किस तरह के दबाव में है। जैसे ज्ञानेन्द्रपति की कविता 'बनानी बैनर्जी' से ये उदाहरण–

''वह अभी कहाँ है, क्यों है, उसकी माँ नहीं जानती
इसके सिवा कि वह अभी सोई है कमरे के सबसे अच्छे कोने में
वह अभी कहाँ है, कैसी है, उसकी चिन्तित दादी नहीं जानती
उसके सयाने हो रहे भाई नहीं जानते
उसकी नींद में वो नहीं झाँकते।''[3]

समाज के भ्रष्ट होने और पुरूषों के चारित्रिक पतन के कारण एक कामकाजी युवती दिन भर की थकी होने के बावजूद रात में चैन से सो भी नहीं पाती बल्कि रातों–रात दुःस्वप्न देखती रहती है।

नारियाँ समाज में सदा से ही उत्पीड़ित होती रही हैं। समाज की नजरों में वो सिर्फ सेविका हैं और ये ही नजरिया उनके उत्पीड़न का कारण है। समकालीन कवियों ने स्त्री के जीवन को बखूबी पहचाना है। सुबह से लेकर रात को सोने तक के सारे कार्यों का चित्रण कवियों ने किया है। जैसे–

''सवेरे–सवेरे
उसने साफ किये
घर भर के झूठे बर्तन
झाड़ू–पोंछे के बाद
बेटियों को सँवारकर
स्कूल रवाना किया
सबके लिए बनाई चाय।''[4]

एक स्त्री की दिनचर्या जिसमें वो सबसे पहले जाग जाती है और सबके सोने के बाद सोती है और इन सब कामों में वो प्रत्येक सदस्य की सुख–सुविधा का ख्याल रखती है। उसका अपना सुख और सपने इन सबमें कहीं पीछे छूट जाते हैं। नारी सबके लिए सेविका के रूप में हाजिर हो जाती है वो अपने को हर एक परिस्थिति में एडजस्ट कर लेती है। कम में ही वो अपना गुजारा भी कर लेती है। जैसे–

''दोपहर भोजन के आखिरी दौर में
आ गये एक मेहमान
दाल में पानी मिलाकर
किया उसने अतिथि सत्कार
और खुद बैठी चटनी के साथ
बची हुई रोटी लेकर।''[5]

भारतीय नारी को उसकी तमाम खूबियों के साथ इन कविताओं में चित्रित किया गया है, जहाँ पर उसके लिये परिवार और पति ही सब कुछ है उसका अपना वजूद कुछ भी नहीं। उसका जीवन परिवार को समर्पित है, घर के सभी सदस्यों को, यहाँ तक कि आराम के लिए भी उसके जीवन में जगह नहीं। वह कोल्हू के बैल की भाँति दिन–रात काम में लगी रहती है। खाना–पहनना भी जहाँ पर उनकी पसन्द से ना हो, वो उस जगह खुश भी कैसे रह सकती है। वो ऐसी जिन्दगी को सिर्फ ढो रही है ना कि जी रही है। ऐसी जिन्दगी में उसे हर पल ऐसे शख्स याद आते हैं जिन्हें उसकी परवाह थी, या जो पल वो खुशी, सुकुन और अपने मन के जी पायी थी। जैसे–

''बिस्तर पर गिरने से पहले

वह अकेले में थोड़ी देर रोयी
अपने स्वर्गीय बाबा की याद में।''[6]

आज भी स्त्री पारम्परिक ढांचे में ढली हुई उसी स्थिति और मानिसकता में जी रही है, पुरूष के अधीन होकर। चुपचाप उत्पीड़न को सहन कर रही है जिसके लिए हमारी पैतृक संरचना उत्तरदायी है। जहाँ लिंगभेद के कारण नारियों की दशा दयनीय है वहाँ स्त्री का अपना कोई अस्तित्व हीं नहीं रह जाता। वह अन्याय, अत्याचार को चुपचाप सहती रहती है। उसकी इसी सहनशीलता के कारण शोषण और भी बढ़ता चला जाता है। पीढ़ी दर पीढ़ी यही सब नारियों के साथ दोहराया जाता रहा है। उनकी इस स्थिति को कवि ने अंधेरी सुरंग में अधूरी इच्छा–सी गुजरती हुई सी कहा है। यह कवि की नारियों के प्रति गहरी संवेदनशीलता है, जहाँ कवि ने नारियों के उत्पीड़न को वाणी दी है। जैसे–

''एक औरत के हाथ जल गये तवे में
एक के ऊपर तेल गिर गया कड़ाही का खौलता हुआ
अस्पताल में हजार प्रतिशत जली हुई औरत का कोयला दर्ज कराता है
अपना मृत्युपूर्व बयान कि उसे नहीं जलाया किसी ने
उसके अलावा बाकी हर कोई है निर्दोष
गलती से उसके ही हाथों फूट गयी किस्मत और फट गया स्टोव।''[7]

तमाम तरह के वहशीपन को झेलती, बद से बदतर जिन्दगी को ढोती स्त्रियाँ ससुराल और पति की हर माँग पूरी करते स्त्रियों के माता–पिता। किन्तु फिर भी नारियाँ अमानवीय व्यवहार झेलने को विवश हैं। कभी ये व्यवहार वो मजबूरी में झेलती हैं तो कभी इस तरह के व्यवहार को अपनी किस्मत मानकर। वास्तव में नारी की इस स्थिति के लिए जिम्मेदार हमारा मूल्यविहीन होता समाज है, जो सब कुछ देखकर, जानकर भी चुप है और कोई भी कदम इन स्थितियों में बदलाव के लिए नहीं उठाता और ना ही ऐसी परिस्थितियों में कोई सहायता करता है, जिसके लिये नारी दोयम दर्जे की है।

सरकारी सुख–सुविधाओं की बात करें तो सम्पन्न औरतों के लिए संसद में सीटे बढ़वाने की बात की जाती है पर आज भी नारियों का एक बड़ा तबका मूलभूत सुविधाओं से भी वंचित है, जो आज भी वही सब सहने पर विवश है–

''एक फर्श धो रही है और देख रही है राष्ट्रीय चैनल पर फैशन परेड़
एक पढ़ रही है न्यूज कि संसद में बढ़ायी जायेगी उनकी तादाद।''[8]

हमारे समाज में स्त्रियों की स्थिति हमेशा दयनीय रही है। लड़कियों की शादी कर माता–पिता अपने कर्तव्यों का पूरा होना समझ लेते हैं, उसके बाद चाहे वो कैसी ही यातनायें, उत्पीड़न, दुर्व्यवहार सहती रहे। चाहे उसे जिन्दा जला दिया जाये, मार दिया जाये, वो तनाव और यातना से पागल हो जाये या स्वयं को क्यों न मार दे। समकालीन कविताओं में इन सभी परिस्थितियों में संघर्षरत नारी की वेदना को वाणी दी गयी है। साथ ही इन कविताओं में नारियों में आई स्वत्व की भावना, आत्मबोध, स्वाभिमान और संघर्षरत नारियों को भी अभिव्यक्ति मिली है। सदियों से दर्द और अमानवीय व्यवहार को सहती नारी ने अब और सहन ना करने का संकल्प लिया है। इसीलिये तो स्वप्न अब उसे डराते नहीं अपितु स्वयं की मुक्ति के लिए जागरूक करते हैं। जैसे–

''बार–बार भागती रही
बार–बार हर रात एक ही सपना देखती
ताकि भूल ना जाये मुक्ति की इच्छा
मुक्ति न भी मिले तो बना रहे मुक्ति का स्वप्न
बदले न भी जीवन तो जीवित बचे बदलने का यत्न।''[9]

अनेक यातनाओं को सहन करने के बावजूद नारी का जीवन के प्रति आत्मविश्वास और दृढ़ इच्छाशक्ति इन पंक्तियों में स्पष्ट हुई है। वो हर उस बन्धन को जो उसे सेविका या गुलाम समझता है, से

मुक्ति की इच्छा रखती है और अपने अस्तित्व को लेकर प्रयासरत है। इस दौर की कविताओं के माध्यम से कवि नारी को उन सब कमियों के प्रति सचेत करते हैं, जो उन्हें प्रताड़ित करने के कारण रहे हैं जैसे अज्ञानता, अशिक्षा, अतिशय भावुकता आदि। जैसे–

''उठो, कि तुम जहाँ हो वहाँ से उठो
जैसे तूफान से बवण्डर उठता है
उठती है राख में दबी चिनगारी।''[10]

समकालीन कवितायें नारियों के जागरण का उद्घोष भी करती हैं। सदियों से उपेक्षित, पद्दलित महिलायें अपना वजूद मिटाकर परिवार, समाज को बनाती आयी हैं। बदले में उन्हें क्या मिला, उपेक्षा, तिरस्कार, यातनायें जबकि वो सभी को प्यार, सम्मान और अधिकार ही देती आयी हैं। उन्हें सिर्फ कर्तव्यों का पालन याद रहा, अपना अधिकार लेना नहीं। समय के साथ, शिक्षा और ज्ञान के आ जाने से नारियों में अस्तित्वबोध का भाव भी जाग्रत हुआ है। ये कवितायें उस भाव की भी अभिव्यक्ति करती हैं। जैसे–

''अपनी एक ऐसी जमीन
जो सिर्फ उसकी अपनी हो
एक उन्मुक्त आकाश
जो शब्द से परे हो
एक हाथ
जो हाथ नहीं
उसके होने का आभास हो।''[11]

स्त्री के प्रति उपेक्षा भाव, अमानवीय बर्ताव, असुरक्षित जीवन आदि को देखकर निश्चित तौर पर यह कहा जा सकता है कि इस आधी आबादी को साथ लिये बिना देश का विकास सम्भव नहीं। यह आज के समय की ज्वलंत समस्या है। जिसके प्रति समकालीन कवि सचेत और जागरूक है और इनकी कवितायें स्त्री–विमर्श को नई धार प्रदान करने वाली हैं, जिन्हें पढ़कर नारी के प्रति होने वाले अत्याचारों पर समाज का ध्यान जाता है। ये वो माध्यम भी है जो नारी को उसके अस्तित्व के प्रति सचेत भाव से मुक्त बनाने में कारगर है और यही स्त्री–विमर्श का उद्देश्य भी है और इस दृष्टि से देखें तो समकालीन कवि चाहे वह स्त्री हो या पुरूष दोनों ही की दृष्टि नारियों के प्रति जो सोच पितृ समाज की है, पर गई है और इसकी कमियों पर इन्होंने प्रहार भी किये हैं और नारी की जागरूकता को भी बढ़ाया है। इन कवियों ने स्त्री–विमर्श के विविध पहलुओं को प्रस्तुत कर प्रशंसनीय कार्य किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. राकेश कुमार, नारीवादी विर्मर्श, पृ0 9
2. किरण अग्रवाल, गाँठे, उन्नयन, पृ0 151
3. ज्ञानेन्द्रपति, भिनसार, पृ0 56, प्रका0 वर्ष 2023, सेठ प्रकाशन
4. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, शब्द और शताब्दी, पृ0 21, प्रका0 वर्ष 2003, वाणी प्रकाशन
5. वहीं, पृ0 21
6. वहीं, पृ0 22
7. उदय प्रकाश, रात में हारमोनियम, पृ0 32, प्रका0 वर्ष 1998, वाणी प्रकाशन
8. वहीं, पृ0 33
9. अरूण कमल, पुतली में संसार, पृ0 24–25, प्रका0 वर्ष 2004, वाणी प्रकाशन
10. निर्मला, पुतुल, नगाड़े की तरह बजते शब्द, पृ0 14, वर्ष 2004, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन
11. निर्मला, पुतुल, नगाड़े की तरह बजते शब्द, पृ0 9–10, प्रका0 वर्ष 2004, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन